भारतीय वाङ्मय

हिन्दी तथा अहिन्दीभाषी क्षेत्रों के साहित्यिक-सांस्कृतिक समाचारों की मासिक पत्रिका

वर्ष 5 | दिसम्बर 2004 | अंक 12

किताबों की दुनिया

बुलाती है तुमको किताबों की दुनिया
ये दुनिया तुम्हें दे रही है निमंत्रण।

न देखा इसे, समझो कुछ भी न देखा
न जाना इसे, तुमने कुछ भी न जाना
इसी में सफलता की कुंजी छिपी है
भरा है यहीं ज्ञान का हर खजाना।

है काँटों के घर में गुलाबों की दुनिया
ये दुनिया तुम्हें दे रही है निमंत्रण।

खजाने को खोलोगे, जीवन मिलेगा
पढ़ोगे इसे, सत्य का धन मिलेगा
पलटते रहो पृष्ठ दर पृष्ठ इसके
इसी में जगत धर्म दर्शन मिलेगा।

सजा लो, सँवारो जो ख्वाबों की दुनिया
ये दुनिया तुम्हें दे रही है निमंत्रण।

कठिन गुत्थियाँ खोलतीं ये किताबें
नवल सृष्टि-रस घोलतीं ये किताबें
इन्हें बाँच लो, अक्षरों की जुबाँ हैं
भले मौन हैं, बोलतीं ये किताबें।

सवालों का हल हैं, जवाबों की दुनिया
ये दुनिया तुम्हें दे रही है निमंत्रण।

— **सूर्यकुमार पांडेय**, लखनऊ

यदि बैलगाड़ी पर यात्रा करनी हो तो प्रादेशिक भाषा सीखो, यदि ट्रेन से यात्रा करनी हो तो हिन्दी सीखो और यदि हवाई जहाज से यात्रा करनी है तो अँग्रेजी सीखो। —**चक्रवर्ती राजगोपालचारी**

जन-जन की शिक्षा के माध्यम पुस्तकालय

प्रतिवर्ष देश-प्रदेश की सरकारें करोड़ों रुपये की पुस्तकें विभिन्न श्रेणी के पाठकों तथा पुस्तकालयों के लिए खरीदती हैं। वे पुस्तकें पाठकों तक पहुँचती हैं या नहीं? पुस्तकों को पाठकों को पुस्तकें सुलभ कराने की व्यवस्था है या नहीं? कितने पुस्तकालय नाममात्र को चल रहे हैं, वहाँ पुस्तकों के पैकेट जाते हैं, खुलते तक नहीं। पुस्तकालय में कर्मचारी नहीं हैं, पुस्तकालयों के खुलने का कोई निश्चित समय नहीं है, पुस्तकालय में बैठकर पढ़ने की व्यवस्था नहीं है। एक कमरे में दो-तीन आलमारियों में नाममात्र को पुस्तकालय चल रहे हैं। आज इन सबके सर्वेक्षण की आवश्यकता है।

पुस्तकालयों को एक-दूसरे से संबद्ध कर कम्प्यूटर द्वारा पुस्तकों को सूचीबद्ध करने और उनकी उपलब्धता की जानकारी देने की आवश्यकता है। पुस्तकालय जन शिक्षा के बहुत बड़े माध्यम हैं। जन-जन की शिक्षा के लिए शिक्षण संस्थाओं से अधिक सक्षम समर्थ पुस्तकालयों की अपेक्षा है जहाँ स्वाध्याय के साधन सुलभ हों। इन पुस्तकालयों में प्रशिक्षित कर्मचारी हों जो पुस्तकों के रख-रखाव, उनकी जानकारी तथा पाठकों की जिज्ञासा की पूर्ति कर सकें।

प्रदेश-स्तर पर सक्षम पुस्तकालय-निदेशक की अपेक्षा है जो समय-समय पर पुस्तकालयों की जाँच करता रहे, पाठकों से उसका संवाद हो, उनकी क्या अपेक्षा है, इसकी जानकारी करे। पाठक किस प्रकार की पुस्तकें चाहते हैं, इसकी जानकारी दें। समय-समय पर पुस्तकालयों में पाठक-संवाद की व्यवस्था हो, तभी पुस्तकालयों की सार्थकता सिद्ध होगी।

लोकतंत्र तभी मजबूत होगा जब लोक प्रबुद्ध होगा। लोक को प्रबुद्ध करने के लिए उनमें स्वाध्याय की प्रवृत्ति का सृजन करने और साधन सुलभ कराने की अपेक्षा है, यह पुस्तकालयों के माध्यम से ही सम्भव है। आशा है, केन्द्र का मानव संसाधन विकास मंत्रालय तथा प्रदेश के शिक्षा एवं संस्कृति मंत्रालय इस ओर ध्यान देंगे और पुस्तकों और पुस्तकालय को देश को प्रशिक्षित करने में सार्थक भूमिका प्रस्तुत करेंगे।

कितने पुराने पुस्तकालय, जिनमें अनेक दुर्लभ ग्रन्थ हैं, वे आर्थिक संकट के कारण रख-रखाव नहीं कर पा रहे हैं, पुस्तकें नष्ट हो रही हैं, भवन जर्जर हो चुके हैं। वे पुस्तकें हमारी ज्ञाननिधि हैं, हमारी बौद्धिक अस्मिता हैं। ऐसे पुस्तकालयों की तलाश कर उनकी रक्षा करें, उनके दुर्लभ ग्रन्थों, पत्र-पत्रिकाओं की सीडी तैयार करायें और उनकी जानकारी वेबसाइट पर दें। इससे यह ज्ञाननिधि देश के प्रत्येक बुद्धिजीवी को सुलभ हो सकेगी और शोध-कार्य को नई दिशा मिलेगी।

— पुरुषोत्तमदास मोदी

सम्मान-पुरस्कार

बाल साहित्यकार को 'राष्ट्रधर्म गौरव' सम्मान

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के अखिल भारतीय बौद्धिक प्रमुख रंगाहरि ने बाल साहित्य लेखन के लिए दो साहित्यकारों व निर्णायकों को सम्मानित किया। उन्होंने राष्ट्रधर्म पत्रिका के विशेषांक 'विभाजन मिटाओ' का लोकार्पण किया। आरएसएस के बौद्धिक प्रमुख ने कहा कि भारत सनातन राष्ट्र है, इसके व्यक्तित्व और अस्तित्व के लिए मिलकर प्रयास करना होगा।

श्री हरि ने माधव सभागार में आयोजित समारोह में शाहजहाँपुर के **डॉ० देशबन्धु** को कथा साहित्य तथा बिजनौर के **डॉ० अजय जनमेजय** को बाल काव्य साहित्य सृजन के लिए राष्ट्रधर्म गौरव सम्मान प्रदान किया। दोनों बाल साहित्यकारों को दस-दस हजार रुपये, अंगवस्त्र व स्मृति चिह्न प्रदान किया गया।

दलित कवि नामदेव ढसाल को सम्पूर्ण जीवन की उपलब्धि सम्मान

प्रधानमंत्री डॉ० मनमोहन सिंह ने 1 नवम्बर को साहित्य अकादमी के स्वर्ण जयन्ती समारोह में सुप्रसिद्ध दलित कवि **नामदेव ढसाल** को 'लाइव टाइम एचीवमेंट' पुरस्कार से सम्मानित किया। साथ ही उन्होंने छह यशस्वी लेखकों को रत्न सदस्यता प्रदान की तथा पाँच युवा लेखकों को स्वर्ण जयन्ती पुरस्कार भी दिये। राजधानी के विज्ञान भवन में आयोजित एक गरिमामय एवं सादगीपूर्ण समारोह में डॉ० सिंह ने अकादमी के नौ वर्तमान फैलो का अभिनन्दन भी किया। उन्होंने अकादमी के स्वर्ण जयन्ती समारोह का उद्घाटन करने के बाद श्री ढसाल को साहित्य में समग्र योगदान के लिये लाइव टाइम एचीवमेंट पुरस्कार प्रदान किया। पुरस्कार में ढाई लाख रुपये की राशि तथा एक प्रतीक चिन्ह और शाल शामिल है। अकादमी के 50 वर्षों के इतिहास में श्री ढसाल यह सम्मान पाने वाले पहले लेखक हैं। पन्द्रह जून 1949 को महाराष्ट्र के पुणे जिले में जन्मे श्री ढसाल ने बड़ी गरीबी में अपना जीवन गुजारा है। वह टैक्सी चलाने से लेकर कसाईखाने में भी काम कर चुके हैं। समारोह में डॉ० सिंह ने रूस के मशहूर हिन्दीसेवी प्रो० ई०पी० चेलीशेव, पंजाबी की सुविख्यात लेखिका अमृता प्रीतम, कन्नड़ के जाने-माने लेखक यू०आर० अनंतमूर्ति, राजस्थानी के सुप्रसिद्ध कलाकार विजयदान देथा, बंगला के सुप्रसिद्ध लेखक शंख घोष और तेलुगू के विद्वान मठ कृष्णमूर्ति को अकादमी की नयी रत्न सदस्यता प्रदान की। इन लेखकों को सम्मान में एक शाल और फलक प्रदान किये। समारोह में श्रीमती प्रीतम की जगह उनकी पौत्री ने यह सम्मान ग्रहण किया।

प्रधानमंत्री ने समारोह में अकादमी के वर्तमान फैलो सर्वश्री विद्यानिवास मिश्र, गोविन्द विनायक करंदीकर, डी जयकांतन, गोविन्दचंद्र पाण्डेय, गुंटर शेषेन्द्र शर्मा, एन० खेलचंद्र सिंह, नीलामणि फूकन तथा श्रीमती कृष्णा सोबती और कुर्रतुलऐन हैदर का अभिनन्दन किया। समारोह में राजाराव, रहमान राही, रामनाथ शास्त्री और राजेन्द्र शाह को भी सम्मानित किया जाना था, पर ये लेखक अनुपस्थित थे। श्रीमती हैदर अस्वस्थ होने के कारण जब मंच के सामने नहीं आ सकीं तो प्रधानमंत्री खुद उनकी सीट के पास जाकर उन्हें सम्मानित किया। प्रधानमंत्री ने लेखकों के गले में पदक पहनाकर सम्मानित किया। प्रधानमंत्री ने हिन्दी की युवा कथाकार नीलाक्षी सिंह, कन्नड़ के लेखक अब्दुल रशीद, बंगला की मंदाक्रांता सेन, अंग्रेजी के रणजी होस्कोटे तथा मलयालम की श्रीमती एस० सितारा को स्वर्ण जयन्ती पुरस्कार प्रदान किये। अकादमी के इतिहास में पहली बार युवा अकादमी पुरस्कार प्रदान किये गये। समारोह में संस्कृति मंत्री एस० जयपाल रेड्डी, अकादमी के अध्यक्ष गोपीचंद नारंग, उपाध्यक्ष सुनील गंगोपाध्याय तथा सचिव के० सच्चिदानंदन भी उपस्थित थे। समारोह में प्रसिद्ध फिल्म निर्देशक गुलजार की अकादमी के पचास वर्षों के इतिहास पर बनायी गयी फिल्म के कुछ अंश भी दिखाये गये तथा जगजीत सिंह का कबीर पर गायन भी हुआ। समारोह की शुरुआत मधुप मुद्गल के गायन से हुई।

डॉ० मनमोहन सिंह से कहा—अकादमी को सुनिश्चित करना चाहिए कि भाषा और भूगोल की सीमाएँ तोड़कर साहित्य सबको सहज रूप से उपलब्ध हो सके।

असगर वजाहत को कथाक्रम सम्मान

साहित्य की कई विधाओं में सशक्त उपस्थिति दर्ज करने वाले 'जिन लाहौर नई देख्यां' और 'कैसी आगी लगाई' के समर्थ रचनाकार **असगर वजाहत** को शनिवार, 20 नवम्बर को लखनऊ में आनन्द सागर कथाक्रम सम्मान से अलंकृत किया गया। इस अवसर पर 'हंस' के सम्पादक राजेन्द्र यादव ने कहा कि सवालों से सीधी मुठभेड़ करने की क्षमता, हिम्मत और प्रवृत्ति के कारण असगर मौजूदा लेखकों में कुछ विशिष्ट हैं।

राय उमानाथ बली प्रेक्षागृह में आयोजित समारोह में कथाकार श्रीलाल शुक्ल ने उन्हें शाल ओढ़ाया और स्मृति चिह्न प्रदान किया। पुरस्कारस्वरूप उन्हें 15 हजार रुपए भी प्रदान किए गए। इस अवसर पर प्रदान किए गए सम्मान पत्र में असगर को मुक्तिबोध ने जिस काव्यानुभव और जीवनानुभव के अद्वैत का समर्थन किया था, वह असगर का नैसर्गिक व्यक्तित्व है। वह शब्द को सामाजिक परिवर्तन के सघन संघर्ष में ला खड़ा करते हैं। उन्होंने स्वातंत्र्योत्तर भारतीय समाज की विचलित कर देने वाली विडम्बनाओं और विभीषिकाओं को रेखांकित किया है। विकास और आधुनिकता के नाम पर चल रहे सत्ता, पूँजी, धर्म और संस्कृति के कदाचार को उन्होंने सतर्क रूप से उजागर किया है। वह अभिव्यक्ति की सभी विधाओं उपन्यास, कहानी, नाटक, नुक्कड़ नाटक, पटकथा, मीडिया लेखन, चित्रकला में समर्थ हैं। डॉ० नामवर सिंह ने कहा कि मंटो की 'खोल दो' के बाद किसी ने लघु कथाओं को साधा है तो वह असगर हैं। उन्होंने इस सन्दर्भ में 'शाह आलम कैंप की रूहें' लघु कथा का खास तौर पर जिक्र किया।

प्रो० पुष्पिता को डॉ० लक्ष्मीमल सिंघवी अन्तर्राष्ट्रीय कविता सम्मान

सुरिनाम में इण्डियन कल्चर सेण्टर में हिन्दी प्रोफेसर **पुष्पिता** को पिछले दिनों यू०के० हिन्दी समिति लन्दन ने उनके नवीनतम कविता संग्रह 'अक्षत' के लिए सविनय प्रशस्ति तथा अभिनन्दन करते हुए 'डा० लक्ष्मीमल सिंघवी अन्तर्राष्ट्रीय कविता सम्मान' से अलंकृत किया। इस अवसर पर विराट कवि सम्मेलन आयोजित हुआ जिसमें अनेक कवियों ने कविता पाठ किया। प्रो० पुष्पिता ने कहा—यह मेरी रचना का सम्मान है, मैंने कविता के माध्यम से संसार को जाना है। संस्कृति और साहित्य मेरा परिवार है। मैंने लगभग 600 कविताएँ सूरिनाम के समाज और संस्कृति पर लिखी हैं। इसके पूर्व 28 सितम्बर को सूरिनाम में प्रानित आर्यन एसोसिएशन ने पुष्पिता को उनकी कृतियों के लिए सम्मानित किया। प्रो० पुष्पिता इस समय पाँच पुस्तकें सूरिनाम के इतिहास, संस्कृति और साहित्य पर लिख रही हैं।

सूर्यकुमार पाण्डेय को महावीरप्रसाद द्विवेदी पुरस्कार

राज्य कर्मचारी संस्थान उ०प्र० लखनऊ ने कवि एवं व्यंग्यकार **सूर्यकुमार पाण्डेय** को दीर्घकालीन साहित्य सेवा के लिए 11 दिसम्बर 2004 को अपने वार्षिक पुरस्कार समारोह में पं० महावीरप्रसाद द्विवेदी पुरस्कार स्वरूप दस हजार रुपये प्रदान किये।

श्री सूर्यकुमार पाण्डेय हिन्दी कविता के एक लब्ध प्रतिष्ठ रचनाकार हैं। उनकी अब तक कुल 15 काव्य-कृतियाँ प्रकाशित हो चुकी हैं। कवि-सम्मेलन मंचों पर व्यंग्य कवि के रूप में समादृत श्री पाण्डेय को सूर पुरस्कार, पं० अमृतलाल नागर एवार्ड, काका हाथरसी हास्य पुरस्कार समेत दो दर्जन से अधिक सम्मान एवं पुरस्कार प्राप्त हो चुके हैं। गीत, हास्य-व्यंग्य तथा बाल साहित्य में गहरी पहचान बना चुके सूर्यकुमार पाण्डेय एक चर्चित व्यंग्य स्तम्भकार तथा दूरदर्शन एवं आकाशवाणी के पटकथा एवं गीतकार हैं।

यत्र-तत्र-सर्वत्र

42वाँ अखिल भारतीय प्राच्य विद्या सम्मेलन

सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी में 42वाँ अखिल भारतीय प्राच्य विद्या सम्मेलन 4-6 नवम्बर 2004 को आयोजित हुआ। सम्मेलन के मुख्य अतिथि जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई-दिल्ली के विजिटिंग प्रोफेसर और व्याकरण के ज्ञाता जार्ज कार्डोना थे। उन्होंने अपने संक्षिप्त उद्‌बोधन में भाषा की शुद्धता पर विशेष जोर दिया।

प्रो० कार्डोना ने कहा कि लौकिक संस्कृत में पाणिनी का व्याकरण प्रयोग में आ रहा है, लेकिन अलौकिक में नहीं। संस्कृत में कुछ ऐसे शब्द हैं जो अत्यन्त व्यावहारिक हैं, पर लोक में उनका प्रयोग नहीं हो रहा है। वेद में इन शब्दों का प्रयोग हुआ है। प्रो० कार्डोना ने कहा पहले असत्य मार्ग पर ही चल कर सत्य मार्ग का अनुसरण किया जा सकता है। विशिष्ट अतिथि अरुणाचल प्रदेश के पूर्व राज्यपाल माताप्रसाद ने कहा कि भारतीय सभ्यता और संस्कृति काफी उदार है। इसका मूलमंत्र जियो और जीने दो है। इसी मूलमंत्र ने ही पूरी दुनिया को वसुधैव कुटुम्बकम् का सन्देश दिया है। सारस्वत अतिथि इलाहाबाद विश्वविद्यालय के पूर्व कुलपति प्रो० आद्याप्रसाद मिश्र ने कहा कि हमारी संस्कृति का आधार संस्कृत ही है। बिना संस्कृत के संस्कृति का विकास नहीं हो सकता है। इसलिए संस्कृत की रक्षा आवश्यक है। सभी प्राच्य विद्याएँ संस्कृत भाषा प्रधान हैं।

अध्यक्षता कर रहे प्रो० कृष्णकांत चतुर्वेदी ने कहा कि समाज, संस्कृति, राजनीति, राष्ट्र और तकनीकी आदि के उत्थान का मूल स्रोत संस्कृत ही है। यह दुर्भाग्य है कि सभी भाषाओं की जननी संस्कृत का इस देश की शिक्षा नीति में स्थान नहीं है।

संस्कृत का विरोध करने वाले इस भाषा के विरुद्ध निरर्थक प्रलाप कर रहे हैं। संस्कृत भाषा पूर्ण वैज्ञानिक है। वैज्ञानिक दृष्टि से सम्पन्न संस्कृत साहित्य में समाहित ज्ञान को लोकहित में सामने लाना आवश्यक है। इससे पहले कुलपति प्रो० राजेन्द्र मिश्र ने अपने स्वागत भाषण में कहा कि यह सम्मेलन अपने आप में असाधारण है। इसी के साथ यह विश्वविद्यालय भी सामान्य नहीं हैं। यहाँ पर जो सम्मेलन होगा उससे न सिर्फ प्रौढ़ विद्वान बल्कि तरुण विद्वान भी लाभान्वित होंगे।

पण्डित भीमसेन जोशी ने जारी किया 'कला समय' का नवीन अंक

प्रख्यात शास्त्रीय गायक पद्मभूषण पण्डित भीमसेन जोशी ने सुप्रतिष्ठित पत्रिका 'कला समय' के नवीन अंक का लोकार्पण करते हुए कहा—कला के मूल्यों की रक्षा कर असल में हम मनुष्य की रक्षा कर सकेंगे। इस दिशा में आज पत्रकारिता को अपनी स्वस्थ भूमिका निभाने की जरूरत है। सांस्कृतिक पत्रिका का कार्य कलाओं की ही तरह पूजा भाव और समर्पण की माँग करता है। ऐसे प्रयासों की आज बेहद जरूरत है। इस अवसर पर 'कला समय' के सम्पादक विनय उपाध्याय ने पण्डित जोशी को पत्रिका के विशेषांक भी भेंट किये।

मनु शर्मा को यशभारती सम्मान

28 अक्टूबर को नागरी नाटक मण्डली, वाराणसी में प्रख्यात साहित्यकार मनु शर्मा के अमृत महोत्सव के अवसर पर आयोजित विशिष्ट समारोह में मुख्यमंत्री मुलायम सिंह ने घोषणा की कि इस वर्ष का यशभारती पुरस्कार मनुशर्मा को दिया जायगा।

इस अवसर पर मनुशर्मा की तीन पुस्तकों—दीक्षा, उस पार का सूरज और खूँटी पर टँगा बसन्त का लोकार्पण किया।

पं० श्रीनारायण चतुर्वेदी की 110वीं जयन्ती

राष्ट्रभाषा हिन्दी की प्रतिष्ठा के प्रति समर्पित पं० श्रीनारायण चतुर्वेदीजी की 110वीं जयन्ती पर कन्नौज की 'स्मृति शेष' के तत्वावधान में आयोजित विचार गोष्ठी में चतुर्वेदीजी को हिन्दी भाषा और साहित्य का तीर्थराज कहा गया।

गोष्ठी के संयोजक डॉ० कृष्णकांत दुबे ने उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर प्रकाश डाला। गोष्ठी की अध्यक्षता कर रहे हिन्दी के प्रसिद्ध कवि डॉ० सुशील राकेश शर्मा ने श्रीनारायणजी को हिन्दी भाषा और साहित्य का संगम तीर्थराज बताते हुए कहा, ''राष्ट्रभाषा हिन्दी की प्रतिष्ठा के प्रति पूर्णतया समर्पित उनके बहुआयामी विराट व्यक्तित्व को किसी एक परिधि में बाँध सकना सम्भव नहीं।''

डॉ० प्रतापनारायण वर्मा ने कहा, ''राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन के बाद उन्हीं का स्थान है।''

17वाँ अखिल भारतीय राजभाषा सम्मेलन

राष्ट्रीय हिन्दी अकादमी, रूपाम्बरा द्वारा राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी की 135वीं जयन्ती तथा स्वतंत्रता की 57वीं वर्षगाँठ के उपलक्ष्य में 2-4 अक्टूबर, 2004 को पुरी, उड़ीसा में 17वाँ अखिल भारतीय राजभाषा सम्मेलन आयोजित हुआ। सम्मेलन में सर्वसम्मति से स्वीकृत प्रतिवेदन भारत सरकार के सभी मंत्रालयों, विभागों, उपक्रमों, निगमों आदि के समक्ष यथोचित कार्रवाई हेतु प्रस्तुत किया गया।

प्रतिवेदन के प्रमुख बिन्दु

(1) शिक्षा नीति में यह व्यवस्था हो कि प्राथमिक शिक्षा के समय से ही बच्चों में हिन्दी के प्रति प्रेम और अभिरुचि जागृत हो और वे राष्ट्रीयता तथा राष्ट्रभाष के भावना की महत्त्व को समझ सकें।

(2) हिन्दी के प्रसार के लिए विदेशों में जहाँ भारतीय मूल के लोगों की बहुतायत है विशेष प्रशिक्षण केन्द्र स्थापित किये जाएँ।

(3) लोकसभा सचिवालय एवं राज्यसभा सचिवालय में हिन्दी कार्यान्वयन सलाहकार समिति का गठन किया जाए।

(4) सरकारी कार्यालयों में भर्ती के लिए हिन्दी भाषा का ज्ञान अनिवार्य किया जाय। राजभाषा समिति एवं गृह मंत्रालय के राजभाषा विभाग द्वारा हिन्दी कार्यान्वयन की प्रगति की निगरानी को सुदृढ़ किया जाए।

(5) भारत में कार्यालयीय हिन्दी के विकास हेतु सरकार इन्दिरा गांधी ओपेन यूनिवर्सिटी (इगनू) को दिशा-निर्देश जारी करे कि वहाँ प्रवेश लेने वाले कर्मचारियों के लिये नये पाठ्यक्रम का निर्माण किया जाये जो अंग्रेजी से अनुवाद के बदले भारतीय संस्कृति, परम्परा तथा चरित्र निर्माण पर आधारित हों एवं जो सर्वभारतीय स्तर पर मान्य हो सके।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल साहित्य शोध संस्थान प्रतिमा अनावरण एवं पुरस्कार अर्पण

31 अक्टूबर 2004 को संस्थान के दुर्गाकुण्ड, वाराणसी परिसर में हिन्दी एवं कन्नड़ के प्रख्यात साहित्यकार डॉ० ना० नागप्पा ने आचार्य शुक्ल तथा संस्थान के संस्थापक गोकुलचन्द्र शुक्ल की आदमकद कांस्य प्रतिमा का अनावरण किया। अध्यक्षता डॉ० राय आनन्दकृष्ण ने की। महात्मा गाँधी काशी विद्यापीठ के कुलपति प्रो० सुरेन्द्र सिंह विशिष्ट अतिथि थे।

वर्ष 2004 का आलोचना के लिए निर्धारित गोकुलचन्द्र शुक्ल पुरस्कार डॉ० शिवकुमार मिश्र ने डॉ० बच्चन सिंह को प्रदान किया। डॉ० मिश्र ने कहा कि आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के कार्य को आलोचना, साहित्यशास्त्र और साहित्यिक इतिहास सभी क्षेत्रों में सही माने में आगे बढ़ाने का कार्य जिन विद्वानों ने किया है उनमें डॉ० बच्चन सिंह प्रमुख हैं। पुरस्कार प्राप्त करने के उपरान्त डॉ० बच्चन सिंह ने कहा कि इतिहास की चुनौती को स्वीकार करने वाला रचनाकार या आलोचक ही कुछ मौलिक कार्य कर सकता है। पुरस्कार के सन्दर्भ में कहा कि उम्र के इस पड़ाव पर मिले पुरस्कार से अवश्य कुछ ऊर्जा मिल सकती है।

यशस्वी आलोचक प्रो० बच्चन सिंह ने सैद्धान्तिक और व्यवहारिक समीक्षा के क्षेत्र में पिछले पाँच दशकों से निरन्तर लेखन कार्य किया है। उनके आलोचनाकर्म का क्षेत्र बड़ा व्यापक है जो रीतिकाल से लेकर समकालीन कविता तक, कविता से लेकर नाटक और कथा साहित्य तक फैला हुआ है। आलोचना के नये-नये वादों और विचारों में उनकी रुचि रही है। उन्होंने 'हिन्दी साहित्य' का दूसरा इतिहास तो लिखा ही है, साहित्य के समाजशास्त्र पर भी हिन्दी की पहली किताब उन्होंने ही लिखी है। उन्होंने अपनी पहली किताब निराला पर लिखी थी (संयोग से वह भी निराला पर हिन्दी की पहली किताब थी) और जीवन की इस संध्या में वे निराला की कविताओं की व्याख्या पर काम कर रहे हैं। हालांकि यह पुरस्कार उन्हें और भी पहले मिल जाना चाहिए था। इसी क्रम में साहित्य के समाजशास्त्रीय अध्ययन के विविध आयाम पर साहित्य गोष्ठी का आयोजन हुआ।

श्री मिलाप दूगड़ की षष्टिपूर्ति

सरदार शहर राजस्थान के गाँधी विद्या मन्दिर उच्च शिक्षा संस्थान (मान्य विश्वविद्यालय) के कुलपति श्री मिलाप दूगड़ ने 9 नवम्बर 2004 को अपने जीवन के स्वर्णिम छः दशाब्द पूर्ण किये। अपने पिता श्री कन्हैयालाल दूगड़ (वर्तमान में श्रीराम शरणजी) द्वारा स्थापित गाँधी विद्या मन्दिर को उन्होंने अपनी प्रतिभा, कर्मठता से श्रीसम्पन्न किया। समाज के चतुर्मुखी विकास के लिए आप निरन्तर सक्रिय हैं। आपका लक्ष्य है—

जहाँ अन्धकार हो वहाँ प्रकाश चाहिए।
जहाँ अज्ञान हो वहाँ ज्ञान चाहिए॥

श्री मिलाप दूगड़ शतायु हों, इसी प्रकार ज्ञान का दीप प्रज्ज्वलित करते रहें यही हमारी कामना है।

— पु०दा० मोदी

कमलकिशोर गोयनका को पं० दीनदयाल उपाध्याय साहित्य पुरस्कार

श्री छोटीखाटू हिन्दी पुस्तकालय, छोटीखाटू (नागौर) राजस्थान प्रत्येक वर्ष हिन्दी के राष्ट्रीय-सांस्कृतिक धारा के प्रतिष्ठित साहित्यकारों को सम्मानित करती है। इसका पन्द्रहवाँ पुरस्कार 'प्रेमचंद के विख्यात विशेषज्ञ' **कमलकिशोर गोयनका** को 30 अक्टूबर, 2004 को छोटीखाटू में पूर्व केन्द्रीय मंत्री डॉ० मुरलीमनोहर जोशी के द्वारा प्रदान किया गया। डॉ० जोशी ने कमलकिशोर गोयनका को मानपत्र एवं ग्यारह हजार रुपये की नकद राशि भेंट की, श्री मदनलाल सैनी ने शॉल एवं श्रीफल तथा राजस्थान सरकार के मंत्री श्री यूनुस खाँ ने माल्यार्पण से गोयनकाजी का स्वागत किया।

★★★

संस्कृति संवाहक हैं पुस्तकालय

संस्कृति से भावी पीढ़ियों को अवगत कराने में पुस्तकालय एक आवश्यक कड़ी का कार्य करता है। आज हम विश्व की तमाम प्राचीन संस्कृतियों से बखूबी अवगत हैं। इस कार्य में पुस्तकालय का बहुत बड़ा योगदान रहा है। पुस्तकालय एक रखवाले की भाँति हमारे सांस्कृतिक विरासत की रखवाली करता है।

भारतवर्ष का भी सांस्कृतिक इतिहास बहुत ही समृद्ध रहा है। हमारे देश के सांस्कृतिक इतिहास का आभास श्रुतियों, स्मृतियों इत्यादि के माध्यम से अतीत में बरकरार रहा। लेकिन यह प्रक्रिया चिर काल तक स्थायी न रह पाने की वजह से ज्ञान को लिपिबद्ध किया जाने लगा। ज्ञान को लिपिबद्ध किये जाने की प्रक्रिया शुरू होते ही इसकी रक्षा एवं इसमें निहित ज्ञान के प्रसार की जिम्मेदारी पुस्तकालय की हो गई। प्राचीन पुस्तकालय भोज-पत्र, ताड़-पत्र, पेपाइरस की छाल, चर्म-पत्र, धातु-पत्र एवं कपड़े इत्यादि पर लिखी सामग्रियों तथा बाद में चलकर कागज के ऊपर लिपिबद्ध किये गए ज्ञान को बड़े ही यत्नपूर्वक संजोकर रखते हुए आए हैं। इन सभी ज्ञानवर्द्धक सामग्रियों से हमारी संस्कृति के ऊपर प्रकाश पड़ता है। इस सन्दर्भ में कुछ पाण्डुलिपि संग्रहालय/पुस्तकालय, पटना, भण्डारकर ओरियन्टल रिसर्च इन्स्टीच्यूट, पुणे इत्यादि महत्त्वपूर्ण केन्द्र रहे हैं जहाँ से हमारी प्राचीन संस्कृतियों के बारे में दुर्लभ सूचनाएँ प्राप्त होती हैं।

आज के आधुनिक पुस्तकालय केवल हमारी सांस्कृतिक धरोहर को संचित कर इससे लोगों को अवगत कराने का ही कार्य नहीं करते बल्कि ये पुस्तकालय क्रियाशील होकर अपनी सांस्कृतिक गतिविधियों द्वारा लोगों का ज्ञानवर्द्धन करने का वीणा उठा लिए हैं।

वर्तमान समय में सार्वजनिक पुस्तकालय अपनी सांस्कृतिक जिम्मेदारी को समुचित तौर पर निभाने का प्रयत्न कर रहे हैं। इन पुस्तकालयों द्वारा गोष्ठियों, सभाओं एवं सम्मेलनों का आयोजन किया जाता है जिनमें विभिन्न सांस्कृतियों के लोग भाग लेकर आपस में चर्चा करते हैं तथा एक-दूसरे की संस्कृति से वाकिफ होते हैं।

गोष्ठियों, नाट्य-मंचन, संगीत समारोह, नुक्कड़ सभाओं इत्यादि के आयोजन द्वारा पुस्तकालय लोगों में सांस्कृतिक गतिविधियों के प्रति रुझान पैदा करते हैं। विभिन्न प्रकार की प्रदर्शनियों के माध्यम से सार्वजनिक पुस्तकालय समाज में एकता, सद्भाव, भाई-चारा को बढ़ावा देते हैं। पुस्तकालय की सारी सांस्कृतिक गतिविधियों द्वारा समाज के लोगों का मानसिक स्तरोन्नयन होता है। कला एवं सांस्कृतिक गतिविधियाँ मनुष्य को कल्पनाशील, सृजनशील सुहृद एवं चिन्तक बनाती हैं। समाज में हर तरह के लोग रहते हैं जिनकी भाषा, स्वभाव, स्तर, परम्परा, रहन-सहन, जीवन-शैली, सभ्यता एवं संस्कृति अलग-अलग हैं। यदि भारतवर्ष की ही उदाहरण लिया जाय तो हम देखते हैं कि यहाँ रहने वाले लोगों की भाषाएँ, परम्पराएँ, संस्कृति, लोकाचार, रहन-सहन बिल्कुल अलग-अलग हैं। किसी एक समाज की प्रचलित परम्परा किसी अन्य समाज के लिए अच्छी नहीं मानी जाती। इसी प्रकार किसी अन्य समाज में त्याज्य परम्परा एवं संस्कृति किसी समाज विशेष में अत्यधिक प्रचलित होती है। सार्वजनिक पुस्तकालयों की सांस्कृतिक गतिविधियाँ हर जाति, समाज एवं सम्प्रदाय के लोगों को एक-दूसरे के करीब लाती हैं तथा उनके बीच आपसी समझदारी को बढ़ावा देती हैं। भारतवर्ष एक ऐसा देश है जहाँ अनेकता में एकता झलकती है।

भारतवर्ष की तमाम संस्कृतियों को एक-दूसरे के पूरक के रूप में स्थापित करने में तथा सबको एक सूत्र में पिरोने में पुस्तकालय का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। आज का आधुनिक समाज विभिन्न प्रकार की मानवीय समस्याओं से जूझ रहा है। आतंकवाद, ईर्ष्या, आपसी द्वेष, घृणा, जातिवाद, सम्प्रदायवाद, क्षेत्रवाद इत्यादि सम्पूर्ण समाज में अपना पाँव पसारे हुए है। ऐसी स्थिति में पुस्तकालय की जिम्मेदारियाँ और भी बढ़ जाती हैं। अपनी इन जिम्मेदारियों को निभाने हेतु पुस्तकालयों को सजग प्रहरी की भाँति अपनी सांस्कृतिक गतिविधियों को अत्यधिक तीव्र करते हुए लोगों में सृजनशीलता एवं मानवता सम्बन्धी गुणों की अभिवृद्धि करनी होगी। सारे राजनेताओं को भी अपने तुच्छ स्वार्थ को त्यागकर लोगों में सांस्कृतिक एकता एवं समझदारी की वृद्धि हेतु खुलकर आगे आना होगा तथा इस कार्य में पुस्तकालयों के महत्त्व को स्वीकारना होगा। पुस्तकालयों के सांस्कृतिक दायित्व को पूरा करने में सरकार द्वारा भी समुचित सहयोग दिया जाना आवश्यक है। तभी पुस्तकालय वास्तव में अपनी जिम्मेदारी का निर्वहन कर पाने में पूर्णतया समर्थ हो सकेंगे।

आज की पाठ्य-पुस्तकें

आपने 'पाठ्य-पुस्तकें कैसी हैं' के अन्तर्गत पाठ्य-पुस्तकों की भूलों की ओर पाठकों का ध्यान आकर्षित किया है, यह सच है कि सरकार द्वारा स्वीकृत पुस्तकें पढ़कर विद्यार्थियों को उल्टी-सीधी बातों पर विश्वास करना पड़ता है। गुजरात सरकार व आगरा विश्वविद्यालय द्वारा प्रकाशित पुस्तकें ही नहीं हैं जिनमें भयंकर भूलें हैं। दिल्ली सरकार ने स्कूलों के लिए जो पाठ्य-पुस्तकें इसी वर्ष छापी हैं, वे भी कम भयावह नहीं हैं। छठी कक्षा के लिए जारी हिन्दी पाठ्य-पुस्तक 'बहार' में पहला पाठ अंग्रेजी के मशहूर लेखक 'रस्किन बॉण्ड' की अनूदित रचना 'चाँदनी चौक में पड़ाव' दी गई है परन्तु यह रचना बच्चों को चाँदनी चौक की गन्दगी से रूबरू कराती हैं न कि वहाँ की ऐतिहासिकता से। इसी पुस्तक के पृष्ठ तीन पर लिखा है ''फिर गर्मी के कारण दुबके पड़े दीपक, चींटी आदि कीड़े-मकोड़े भी जमीन और दीवारों की दरारों से निकल-निकल कर बाहर आने लगे थे... यह वक्त छिपकलियों के लिए भी काफी बढ़िया था, मानो हफ़्ते से धैर्यपूर्वक प्रतीक्षा करने के बाद, वे भी अपने तोहफे हासिल करने निकल पड़ी थीं।''

इसी पुस्तक के पृष्ठ संख्या 12 पर 'पाली सेन गुप्ता' की रचना 'और बन्नी बदल गई' में तो अबोध बच्चों को साम्प्रदायिकता की शिक्षा दी गई है। पृष्ठ 13 पर लिखा है ''मेरठ में बहुत मुसीबत हो गई है.... वहाँ दंगों में बहुत से मुसलमान मारे जा रहे हैं।...''

भारत का इतिहास, भाग-2 कक्षा सात के पृष्ठ संख्या 63, पर पूरे सिख धर्म और सिख गुरुओं के त्याग बलिदान को महज 16 पंक्तियों में ही समेट दिया गया है।

देश की भावी संतति को हम क्या सिखाना व पढ़ाना चाहते हैं? ऐसी पाठ्य-पुस्तकों से उनके मानस पटल पर क्या प्रभाव पड़ेगा, यह तो भगवान ही जाने! **— सुखपाल गुप्त,** दिल्ली

पुस्तक समीक्षा

स्मृति शेष
देवेश का दस्तावेज
डॉ० इन्द्रदेव सिंह

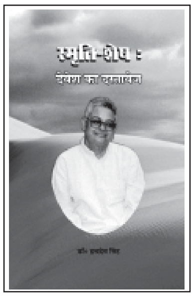

प्रथम संस्करण : 2004
ISBN : 81-7124-392-4
विश्वविद्यालय प्रकाशन
वाराणसी
मूल्य : 200.00

दुख के सिरहाने से जीवन का पुनरावलोकन

संजय गौतम

साहित्य की कथित मुख्यधारा के बाहर बहुत से ऐसे लोग होते हैं, जो साहित्य एवं समाज में सक्रिय हस्तक्षेप करते हैं। अपने आसपास के जीवन को सुन्दर बनाने के कर्म में निरत रहते हैं। जीवन एवं साहित्य में निरन्तर आवाजाही से दोनों अंतर्विरोधों के बीच सन्तुलन बैठाते रहते हैं। ऐसे लोगों में हैं डॉ० इन्द्रदेव सिंह। इन्द्रदेव सिंह श्री महंत रामश्रयदास महाविद्यालय, भुड़कुड़ा गाजीपुर में प्राचार्य रहे। पढ़ाई के पश्चात रोजी-रोटी के लिये आसाम भी गये। वहाँ प्राग ज्योतिष कालेज में अध्यापन कार्य किया। एनसीसी के कैप्टन भी रहे। भुड़कुड़ा में डिग्री कालेज के प्राचार्य का पद सँभालने के पश्चात उन्होंने उसके निर्माण का संकल्प किया और अपनी रचनात्मक ऊर्जा से उन्होंने भवनविहीन विद्यालय को विशाल विद्यालय के रूप में परिणत किया। इस दौरान उन्होंने अध्ययन एवं लेखन भी किया। उनकी पुस्तकें हैं भुड़कुड़ा की संत परम्परा, उन्नति देखा घर में ज्योति पसार, आइने में भारत तथा पतझड़ और बसन्त।

प्रस्तुत पुस्तक स्मृति शेष : देवेश का दस्तावेज उनकी आत्मकथा है। जब इन्द्रदेव सिंह किडनी के रोगी के रूप में जीवन एवं मृत्यु से जूझते हुए वेल्लोर के अस्पताल में भर्ती हुए, डायलिसिस एवं प्रत्यारोपण की लम्बी प्रतीक्षा और नींद की उचटन में उन्हें अपना पिछला जीवन रह-रहकर कौंधने लगा। बार-बार उन्हें अपना बचपन, शिक्षा, आसाम का जीवन एवं भुड़कुड़ा में संतों-महात्माओं के बीच बिताया हुआ जीवन याद आता। उन्हें अपने पुत्र कमल की ब्लड कैंसर की चिकित्सा एवं मृत्यु भी याद आती। छोटे-छोटे संघर्षों से अँटे पड़े इस जीवन ने उनमें एक द्रष्टा का सा भाव भर दिया। उन्होंने मैं के रूप में जीवन को नहीं देखा बल्कि उसे अन्य के जीवन की तरह देखा। मानो देवेश कोई दूसरा पात्र हो और वह एक द्रष्टा की तरह देवेश के जीवन को देख रहे हैं। अज्ञेय ने कहा था दुख व्यक्ति को मांजता है। दुख का अतिरेक व्यक्ति में तटस्थ भाव भी भर देता है। यही तटस्थता इस आत्मवृत्त में दिखती है।

इस आत्मवृत्त में किडनी रोग की चिकित्सा की पेंचीदिगियाँ, अत्यधिक व्यय, अस्पताल का माहौल, लोगों का दु:ख-दर्द उभरता है। यह आत्मकथा बनती है उन छोटे-छोटे वृत्तांतों से जो जीवन में घटी होती है, उन छोटे-छोटे सपनों से जिन्हें देवेश अपने जीवन में देखते हैं, भुड़कुड़ा की मिट्टी एवं वहाँ की संत परम्परा के प्रति देवेश के लगाव से। ग्रामीण जीवन के कड़ुवे यथार्थ से, जिन्हें देवेश ने जीया है। यही अनुभव चिकित्सा के दौरान देवेश की स्मृति में आलोकित होते हैं और आत्मवृत्त अपना रचनात्मक स्वरूप ग्रहण करता है।

स्मृतियों के साथ दूरी होने पर कैसा तटस्थ भाव आ जाता है, इसका उदाहरण अपने पुत्र की मृत्यु की स्मृति में होता है और विडम्बना बोध से मन भर जाता है। जब देवेश पुत्र की मृत्यु के बद दवा की दुकान पर दवा लौटाने गये तो दुकानदार ने कहा था कि देवेश भाग्यशाली थे कि उनका पुत्र जल्दी चला गया नहीं तो कर्ज करके अपने को प्राय: बेचकर वह घर लौटते और लड़का न तो ठीक था और न स्वस्थ हो ही सकता था और दवाइयाँ तो वे वापस लेते नहीं आखिर घोड़ा घास से यारी करेगा तो खायेगा क्या? गाँव की उस समय की दशा का देवेश ने इन शब्दों में बयान किया है, जो गाँव के यथार्थ को व्यक्त करता है—चैत में रबी की फसल हुई, आषाढ़ तक चली, सावन-भादों में सांवा कटा दस दिन वह भी चला, भादों में भंदई की फसल कटी, दस पन्द्रह दिन वह भी साथ दे सकी फिर बाजरा, उर्द पके...। (पृ० 21) इस तरह उन दिनों पूरे वर्ष तत्काल हुई फसलों पर ही जीवन आश्रित था। इसी तरह के तमाम अनुभव इस आत्मवृत्त में व्यक्त हुए हैं, जो देवेश की स्मृति को पूरे समाज और देश की स्मृति बना देते हैं।

'गांडीव' से

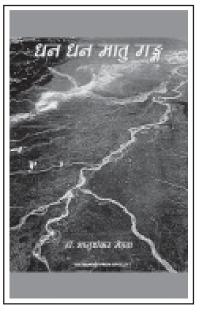

धन धन मातु गङ्ग
डॉ० भानुशंकर मेहता

प्रथम संस्करण : 2004
ISBN : 81-7124-376-2
विश्वविद्यालय प्रकाशन
वाराणसी
मूल्य : 250.00

गंगा मैया के संकट पर बहुआयामी विमर्श

बनारस के किसी भी आयाम पर जानकारी की जरूरत हो तो सबसे पहले याद आता है डॉ० भानुशंकर मेहता का नाम। पेशे से चिकित्सक होते हुए भी डॉ० मेहता ने रंगकर्म एवं बनारस में अपनी दिलचस्पी के चलते 'इन्साइक्लोपीडिया' का दर्जा हासिल किया है। वाराणसी एवं गंगा के प्रति उनके गहरे लगाव का ही परिणाम है यह पुस्तक 'धन धन मातु गङ्ग'। इस शीर्षक निबन्ध में डॉ० मेहता ने लिखा है "गंगा मेरी माँ है। बहुत प्यारी माँ है। गंगा की गोद में खेलना, गंगा जलपान करना कितना सुन्दर है। गंगा तट पर जाते ही मन हर्षित हो किलोल करने लगता है। इतना ही नहीं, उस कलकल प्रवाहिणी माँ का नाम मात्र लेने से मन धुला-धुला सा लगता है। हाँ, ऐसी महिमामयी है मेरी माँ।" (पृ० 55) लेकिन यह माँ संकट में हैं। प्रदूषण ने इसे खतरे में डाल दिया है। बनारस आते-आते यह गंगा रह ही नहीं जाती है—"हे काशीनाथ अब आपकी पुरी में गंगा नहीं विसंगा बहती है। एक नदी जरूर है पर उसमें गंगा कहाँ है? वह तो हरिद्वार से ही चुपके से दूसरे पथ से भाग कर छुप गई, गंगा होती तो उसमें रोगाणु पलते। कभी विज्ञानी हैरान थे कि उस गंगा जल में क्या है, जो यह सड़ता नहीं, प्रदूषित नहीं होता और अब इसी तथाकथित 'गंगा' में रोगाणु घर बना रहे हैं। क्या त्रिभुवन तारिणी तरल तरंगा, सुरसरि गंगा होती तब भी यही हालत होती। शायद नहीं। और जो नदी है वह भी अपने भाग्य पर रोती है। उसे बाँधा गया है, काटा गया है, छाँटा गया है। वृक्षविहीन पर्वतीय वनों से होते हुए क्षरण से उसका उदर उलथा हो गया है। वह बीमार हे, उसके पेट में हलचल मची है, वह पीड़ा से उफनती हैं तो तट हाहाकार कर उठते हैं, लगता है बाढ़ में सृष्टि बह जाएगी और ऐंठ कर वह सूख जाती हैं तो कूप सरोवर का भी पानी उतार देती हैं। (पृ० 58)" गंगा कितने गहरे संकट में हैं और इस संकट को कितना गहराई से महसूस किया है डॉ० मेहतना ने। यह उपर्युक्त उद्धरण से पता चलता है। गंगा संकट में हैं यानी गंगा की घाटी में हजारों वर्ष से विकसित सभ्यता संकट में है, पूरी मानवता संकट में है। फिर भी गंगा की घाटी के निवासी निश्िंचत भाव से गंगा को प्रदूषित करने में अपना योगदान दे रहे हैं। उन्हें ही सचेत करने के लिए इस पुस्तक ने आकार लिया है।

पुस्तक में गंगा की पौराणिकता को जीवंत करने वाले अनेक लेख हैं। जिनमें गंगा अवतरण पर रूपक, देवनदी गंगा (डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल) इत्यादि प्रमुख लेख है। 'गंगा तीरे वाराणसी' में बनारस की महिमा व्यक्त की गई है। 'घाट की बात' शीर्षक लेख में वाराणसी के सभी घाटों की ऐतिहासिकता एवं पौराणिकता का वर्णन है। गंगा कला और साहित्य में तथा भारतीय दृश्य कलाओं में गंगा (डॉ० आनन्दकृष्ण) में इन विषयों पर विस्तार से विचार किया गया है। पुस्तक में गंगा सम्बन्धी सभी आयामों मसलन राष्ट्रीय एकता के सन्दर्भ में, गंगा दशहरा, शाश्वत गंगा, गंगा स्नान इत्यादि विषयों पर जानकारी पूर्ण आलेख है।

अंत में भारतीय कवियों द्वारा लिखी गई कविताओं का भी संकलन किया गया है, जिसमें गालिब, शेख अली हाजी, बेढ़ब बनारसी, नजीर बनारसी, पदमाकर इत्यादि हैं। इस तरह यह पुस्तक गंगा के सन्दर्भ में हमारी भावनाओं को जगाने के साथ ही साथ तमाम तथ्यों एवं सन्दर्भों की प्रस्तुति से हमारी

विज्ञान चेतना को आलोकित करती है और यह बताने का प्रयास करती है कि यदि हम अब भी नहीं जगे तो गंगा के साथ-साथ यह सभ्यता भी नष्ट होगी। हमें अपनी सभ्यता को बचाना हे तो गंगा को बचाना ही होगा। प्रदूषण के सम्बन्ध में कुछ सावधानियाँ तो ऐसी हैं, जिन्हें हम आज से ही शुरू कर सकते हैं जैसे गंगा में जानवर डालना, साबुन स न नहाना, शौच न करना इत्यादि। लेकिन इसी संकलन के कुछ लेख और गहरा संकेत करते हैं और कहते हैं कि प्रदूषण की समस्या औद्योगिक सभ्यता में ही गहराई से छिपी है और औद्योगिक सभ्यता की चाल ही ऐसी है कि हम प्रदूषण से बच ही नहीं सकते।

गंगा के साथ-साथ यदि हम सभ्यता के सम्बन्ध में बुनियादी प्रश्नों को उठा सकें तो अपनी गंगा चिंतन को सार्थक परिणति तक पहुँचा सकेंगे। यह पुस्तक हमारे इस कार्य में मदद के लिए पीठिका की तरह है।

—*'गांडीव' से*

हिन्दी गद्य प्रकृति और रचना संदर्भ

डॉ० रामचन्द्र तिवारी

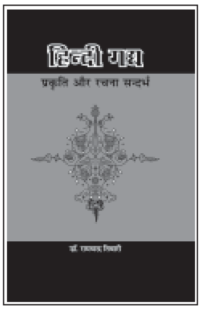

प्रथम संस्करण : 2004
ISBN : 81-7124-379-7
विश्वविद्यालय प्रकाशन
वाराणसी
मूल्य : 120.00

हिन्दी गद्य : प्रकृति और रचना सन्दर्भ हिन्दी गद्य साहित्य के प्रबुद्ध विद्वान डॉ० रामचन्द्र तिवारी की नवीनतम कृति है। यह हिन्दी गद्य के विभिन्न पक्षों से संबद्ध छब्बीस निबन्धों का संकलन है। जैसा कि लेखक ने सूचित किया है, ये निबन्ध विभिन्न अवसरों पर लिखे गये थे, पर इस पुस्तक में ये विशेष व्यवस्थित रूप में संकलित किये गये हैं।

प्रारम्भ के चार निबन्ध हिन्दी की प्रकृति और भारतेन्दु की भाष-चेतना और महत्त्व पर प्रकाश डालते हैं। शेष निबन्ध हिन्दी के प्रसिद्ध लेखकों (प्रेमचंद, मैथिलीशरण गुप्त आदि से लेकर अब तक के नये कवियों तक) के गद्यलेखन का विश्लेषण-विवेचन करते हैं। चार निबन्धों में प्रेमचंद की कहानियों (पंच परमेश्वर, बूढ़ी काकी, ईदगाह और कफ़न) की व्यावहारिक समीक्षा की गयी है।

डॉ० रामचन्द्र तिवारी ने हिन्दी गद्य की मूल प्रकृति की व्याख्या साधार तर्कसंगत ढंग से की है—हिन्दी की मूल प्रकृति अतिवादिता की नहीं, मध्यम मार्ग की है; यह विभिन्न प्रभावों को आत्मसात् कर विकसित होती हुई उदार, सहज समन्वयवादी भाषा है, जिसमें हिन्दी क्षेत्र की मानसिकता सहज रूप में अभिव्यक्त हुई है। लेखक के शब्दों में, इसे "हम संघर्षशील हिन्दी-भाषी जनता की सम्पूर्ण मानसिकता के गतिशील प्रतिबिम्ब के रूप में देख सकते हैं।" इसके प्रारम्भिक रूप-निर्माण में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण योगदान रहा। महावीरप्रसाद द्विवेदी, बालमुकुन्द गुप्त, प्रेमचंद आदि के कृतित्व से इसका जो रूप बना, वही हमारा 'जातीय गद्य' है। विभिन्न रचनाकारों के गद्य पर विचार के क्रम में रचनाओं के समय-सन्दर्भ एवं विशिष्ट प्रतिभा से प्रेरित-प्रभावित गद्य-रूपों के वैशिष्ट्य को रेखांकित किया गया है। अवधि विशेष के गद्य पर लेखक की कुछ टिप्पणियाँ द्रष्टव्य हैं—"स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद सन् 1950 से 60 तक का हिन्दी-गद्य वस्तुत: रूमानी मानसिकता से मुक्ति और आधुनिकता के स्वीकार की संक्रमणकालीन चेतना का गद्य है।" 'साठोत्तरी पीढ़ी का हिन्दी-गद्य आधुनिकता के स्वीकार का गद्य है।' लेखक ने केवल टिप्पणी नहीं की है, उसे आधार भी दिया है।

प्रेमचंद की प्रसिद्ध कहानियों की व्यावहारिक समीक्षाओं का भी अपना महत्त्व है—ऐसी समीक्षाएँ कम लिखी गयी हैं। 'आधुनिक हिन्दी कथा-साहित्य में नारी चेतना' और 'नये कवियों का आलोचनात्मक गद्य' का भी भाषा-विवेचन लेखक द्वारा सूक्ष्म विश्लेषण के कारण हमारा ध्यान आकृष्ट करता है।

हिन्दी गद्य के विकास एवं वैशिष्ट्य के अध्ययन में रुचि रखनेवाले पाठकों-अध्येताओं के लिए 'हिन्दी गद्य : प्रकृति और रचना-सन्दर्भ' एक उपयोगी कृति है, यह नि:संकोच कहा जा सकता है।

— **सिद्धकुमार,** राँची

अघोरपंथ और संत कीनाराम

डॉ० सुशीला मिश्र

प्रथम संस्करण : 2004
ISBN : 81-7124-396-7
विश्वविद्यालय प्रकाशन
वाराणसी
मूल्य : 250.00

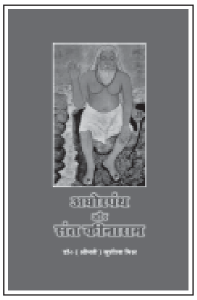

अघोर पंथ और संत कीनाराम के प्रति वर्षों से निर्मित अनाकादमिक अवधारणा को विश्वविद्यालय प्रकाशन से प्रकाशित अद्यतन कृति खारिज करती दिखायी पड़ती है। इसकी लेखिका डॉ० सुशीला मिश्र संत साहित्य के सन्दर्भ में कीनाराम साहित्य की व्यापक जाँच-पड़ताल करती हैं। अपनी व्यापक शोध दृष्टि से उन्होंने कीनाराम को एक संत कवि के रूप में प्रतिस्थापित किया है।

वस्तुत: यह शोध ग्रन्थ का प्रकाशित रूप है। संत कीनाराम साधना और सिद्धि के क्षेत्र में अप्रतिम व्यक्तित्व हैं। इसमें एक ओर अघोर पंथ की ऐतिहासिकता पर विचार हुआ है तो दूसरी ओर उससे सम्बद्ध कीनाराम के साहित्य पर गहन अन्वेषण एवं अनुशीलन इस पुस्तक में देखा जा सकता है। परम्परानुमोदित संतों के सन्दर्भ में भगवान अवधूत राम तक विचार-विमर्श हुआ है। उनके दोनों वर्तमान शिष्यों की प्रसंगत: चर्चा शोध को प्रामाणिकता की कसौटी पर कसने का एक सफल प्रयास लगता है।

16वीं-17वीं शती में कीनाराम का समाज पर अन्यतम प्रभाव दिखायी पड़ता है। उनकी साधना वैष्णव अनुचिंतन से प्रारम्भ होकर शैवशाक्त परम्परा तक पहुँचती है। परिणामत: वैष्णवों की भक्ति तथा शैव शाक्तों की उदारता उनके चिंतन के मूल में कृतियों के माध्यम से अभिव्यक्त होती है। कृतियों के वस्तुपक्ष के साथ कला पक्ष का निदर्शन भी प्रस्तुत पुस्तक की विशेषता कही जा सकती है। संत कीनाराम के चमत्कार (प्रतिहार्य) और उनकी सिद्धियाँ आज भी लोकमानस में उत्सुकता और कुतूहल का विषय बनी हुई हैं। उनकी कृतियों का प्रतिपाद्य सहज जीवन का हामी भरता है। रमता राम की स्थापना करता है। निर्बन्ध जीवन की वकालत करता है। अनुभव की साधना पर बल देता है। जाँति-पाँति विहीन समाज का पक्षकार बनता है। शास्त्र के बिना भी धर्म अध्यात्म की निष्ठा जगाता है। बावजूद इसके कीनाराम का मूलस्वर भक्तिमय है।

दुखद है कि आज तक संत साहित्य के व्यापक परिप्रेक्ष्य तथा मूल धारा में समाहित कर संत कीनाराम की रचनाओं का मूल्यांकन नहीं हो सकता है। इस अभाव की पूर्ति कुछ हदतक यह पुस्तक करती है। अभी संत कीनाराम और अघोरपंथ पर अकादमिक कार्यों की आवश्यकता महसूस की जाती है जिससे संतों और भक्तों का परिप्रेक्ष्य कीनाराम साहित्य का आधार बन सके। बहुत सम्भव है कि संत कीनाराम के साहित्य से संतमत के अनुदघाटित अध्याय उद्घाटित हो सकें। पुस्तक में चित्रों का संयोजन इसकी प्रामाणिकता और उपयोगिता के लिए पर्याप्त दिखायी पड़ता है।

— **(डॉ०) उदयप्रताप सिंह**
सारनाथ, वाराणसी

एक विश्व : एक संस्कृति

पं० व्रजवल्लभ द्विवेदी

प्रथम संस्करण : 2003
ISBN : 81-7124-334-7
विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी
मूल्य : 150.00

विश्व एकता की चिन्ता का प्रामाणिक ग्रन्थ

आचार्य व्रजवल्लभ द्विवेदी संस्कृत विद्या के विख्यात पण्डित हैं। संस्कृत विश्वविद्यालय में आचार्य पद से निवृत्त हैं। इनका मुख्य विषय तंत्रागम रहा है। आजकल तंत्र अत्यन्त सीमित अर्थ में लिया जाता है। आचार्य द्विवेदी तंत्र विद्या को प्राचीनतम और प्रशस्त मानते हैं। इसका क्षेत्र जादू-टोना से बढ़कर सम्पूर्ण जीवन है। किन्तु द्विवेदीजी अपने को तंत्रागम तक सीमित न रखकर सम्पूर्ण भारतीय साहित्य का आलोड़न करते हैं। विश्व एकता और विश्व संस्कृति को ध्यान में रखकर सैमेटिक आदि विचारधाराओं का भी योग्यतापूर्वक विश्लेषण करते

हैं। आज की राजनीति पर भी इनकी गहरी पकड़ है। किसी भी विचार को फैलाने में आज का विशेष महत्त्व है। विश्व एकता की दृष्टि से आज उत्साहजनक वातावरण नहीं है। आज जोड़ने की अपेक्षा तोड़ने पर अधिक बल है। सम्पूर्ण चिन्तन पर गोरी जाति का प्रभुत्व है। गोरी जाति भोगवादी है। अपने भोगी मन के कारण ही साम्य का नाम लेकर भी साम्राज्यवादी हैं। साम्य न तो उनके अपने देशों में है, न वे इतर देशों में साम्य की प्रतिष्ठा चाहते हैं।

द्विवेदीजी ने अत्यन्त विस्तार से भारतीय साहित्य का अध्ययन करके बताया है—भारत के नानाविध साहित्य में साम्य के प्रभूत तत्त्व हैं। इसका एक बड़ा कारण भारतीय चिन्तन में अध्यात्म की प्रमुखता है। भारतीय चिन्तन सर्व के सुख को अपना आदर्श मानता है। वह अपने विश्वासों को किसी पर लादना नहीं चाहता है। किन्तु स्वधर्म को छोड़ना भी स्वीकार्य नहीं है। भारतीय धर्म के मुकाबले इस्लाम और ईसाई दूसरे के धर्म को बदलने में लगे हैं। दोनों ही अपने धर्मों से अतिरिक्त धर्म वालों का धर्मांतरण कर अपने-अपने धर्मों में लाने का बलात् प्रयत्न करते हैं। इस्लाम धर्मांतरण बल से और ईसाई छल से करता है। ईसाई की सेवा और इस्लाम की समानता में छल है जो जाति अपनी पत्नी को समानता नहीं देती है, वह अन्यों को समानता कैसे देगी? दोनों के चिन्तनों में विविधता का घोर अभाव है। राष्ट्रपति रूजबेल्ट के प्रतिनिधि मि० विल्की ने 'वन वर्ल्ड' नामक ग्रन्थ लिखा। किन्तु इस ग्रन्थ का उद्देश्य सबको अमरीकी प्रभाव में लाना है। द्विवेदीजी को इस पुस्तक का यह विचार पसन्द नहीं। इन्हें तो भारत मूल के सभी धर्मों में विश्व एकता के तत्त्व मिलते हैं।

ऐसा भी नहीं है कि भारत में वैर विरोध नहीं रहे हैं। फिर भी शीघ्र ही उनमें समझौता और सामंजस्य होता रहा है। परिचय और उससे प्रभावित चिंतक नाना प्रकार के भेद देखते हैं। अभेद में भेद करते हैं। स्वतंत्र भारत में भेदकरण को और बढ़ाया जा रहा है। ब्राह्मण-श्रवण, दक्षिण-उत्तर, आर्य-द्रविड़, द्विज-शूद्र, सनातनी-बौद्ध आदि अनेक प्रकार के द्वन्द्व खड़े किये गये। द्विवेदीजी अनेक शास्त्रीय प्रमाणों से कहते हैं—भारत में शूद्र की भी पूर्ण प्रतिष्ठा थी। शूद्र को भी प्रतिष्ठा देने की परम्परा अनादि है। इस सन्दर्भ में वे वैदिक साहित्य से लेकर महात्मा गाँधी तक का प्रमाण प्रस्तुत करते हैं।

190 पृष्ठों की यह पुस्तक पाँच अधिकारों (खण्डों) में बँटी है। विचार-पद्धति में छिछलेपन का सर्वथा अभाव है। ऐसे विचारों में द्विवेदीजी अकेले नहीं हैं। इनके अनेक समसामयिक इनके साथ हैं। इनमें प्रमुख हैं—महामहोपाध्याय गोपीनाथ कविराज, काका कालेलकर, आचार्य नरेन्द्रदेव, प्रो० मुकुटबिहारीलाल, प्रो० राजाराम शास्त्री आदि। यह ग्रन्थ एक उदारमना संस्कृतज्ञ का लेखन है। इसमें आजकल के संस्कृतज्ञों का संकोच नहीं है। पुस्तक एक साथ ही शास्त्रीय और सामाजिक दोनों है। इक्के-दुक्के धर्म परिवर्तनवादियों का संग करके भी द्विवेदीजी धर्मांतरण के परम विरोधी हैं क्योंकि धर्मांतरण विश्व एकता का परम शत्रु है। विश्व एकता का आधार तो सर्वधर्म समभाव है। द्विवेदीजी सरल स्वभाव के व्यक्ति हैं। यह सरलता और सहजता पूरी पुस्तक में फैली है। असहमति के स्थान बहुत हैं, किन्तु सर्वत्र ही आक्रामकता का अभाव है।

यह पुस्तक सबके लिए पाठ्य है। ज्ञान की दृष्टि से भी, एकता की दृष्टि से भी। विश्व-एकता तो अभी तक कल्पना है, किन्तु एकता के बीच ही नहीं, पौध की दृष्टि से भी पुस्तक महत्त्वपूर्ण है। पुस्तक का देश-काल इसका स्वागत करेगा। राजनीति तो गन्दी हो ही गयी है। शिक्षा के उच्च संस्थानों में इस प्रकार अध्ययन, विश्लेषण और आदर्श का नितान्त अभाव है। लेखन के अनेक तत्त्वों में एक तत्त्व साहस का भी है। लेखक भयवश अनेक बातें छिपा लेता है। कभी-कभी तो भयकारी की भाषा विचार को अपना लेती है। भय का मानस वह कहता है जो उसकी विचार सरिता के विरुद्ध है। किन्तु द्विवेदीजी में साहस है। आज जब कुछ लोग हिन्दू कहलाने पर बल दे रहे हैं—''गर्व से कहो कि हम हिन्दू हैं''। ऐसे वाक्य के विरुद्ध खड़े द्विवेदीजी कहते हैं—हिन्दू मत कहो। तुम आर्य हो, भारती, सनातनी आदि हो। हिन्दू धर्म में आतंकवाद की विरल स्थिति आगंतुक दोष है। यह इस्लामिक प्रभाव के कारण है। आतंकवाद भारत धर्म का स्वभाव नहीं है। इसके मुकाबले आतंक इस्लाम का स्वभाव है। द्विवेदीजी ने एक और महत्त्वपूर्ण तथ्य पर लक्ष्य किया है—आज का हिन्दू धर्म मनुवादी न होकर अम्बेडकरवादी है। उनके संविधान से संचालित है।

बार-बार कहा जाता है कि आचार्य शंकर ने बौद्धधर्म को भारत से भगा दिया। द्विवेदीजी इसे द्वेषमूलक कथन कहते हैं। भारत ने तो यहूदियों, पारसियों और तिब्बती बौद्धों को शरण दिया। भारत किसी को भगाता नहीं, शरण देता है। शंकर ने बौद्धों को भगाया नहीं। उन्हें अपना बना लिया। अपने में रसा बसा लिया, अवतार मान लिया। पूरी पुस्तक में लेखक विभिन्न गम्भीर प्रश्नों से जूझता है। उनका पाण्डित्यपूर्ण उचित समाधान देता है।

सम्प्रदाय, पंथ, धर्म, नैतिकता, ऋषि-मुनि, धर्म-निरपेक्षता आदि शब्दों का तर्कपूर्ण एवं पारम्परिक अर्थ बताया गया है। उदाहरण के लिए सम्प्रदाय, भारतीय चिन्तन का एक अत्यन्त प्रतिष्ठित शब्द, कैसी दुर्दशा को प्राप्त कर गया है। यही स्थिति धर्म की है। धर्म और नैतिकता का भेद बताते समय लेखक धर्म को दो लोकों की यात्रा का विचार मानता है जबकि नैतिकता मात्र इहलौकिक है। इसी प्रकार ऋषि और मुनि के भेद को भी अत्यन्त सुस्पष्ट ढंग से बताया गया है।

कुछ वाक्य तो सूक्ति जैसे लगते हैं—अर्थ से सभ्यता और धर्म से संस्कृति का निर्माण होता है। साहित्य इसका वाहक एवं संस्थापक माना जाता है। वैदिक (ब्राह्मण) संस्कृति अथवा श्रमण संस्कृति की पृथक चर्चा छल-छद्म से भरी कपट नीति का खेल खेलने वाले पाश्चात्यों का प्रचार मात्र है। ऋषि संस्था प्रवृत्ति प्रधान और मुनि संस्था निवृत्ति प्रधान थी। धर्म का अर्थ न्यायपूर्ण ढंग से काम करना। धर्म परिवर्तन एक अशुभ कार्य है। यह भारत का आठवाँ आश्चर्य है कि धर्मांतरण को मान्यता देनेवाला समाज धर्मनिरपेक्ष है। भारतीय संस्कृति की इस एकरसता को ही 'सनातन धर्म' नाम दिया गया है।

इस प्रकार के जाने कितने ही विचार सूक्तियों से पूरा ग्रन्थ महत्त्वपूर्ण हो गया है। छोटी-सी पुस्तक के गागर में विचार और विश्लेषण का सागर भरा है। धर्म और संस्कृति के इस विघटनकारी देशकाल में इस पुस्तक का विशेष महत्त्व है। भारत की पुरानी विचारधारा को आधार बनाकर लेखक ने सचमुच ही एक विश्व की स्थापना की है। आज ऐसी अनेक पुस्तकों की आवश्यकता है। यह पुस्तक भारतवासियों में आत्मविश्वास एवं दुनिया के अन्य लोगों का मार्ग प्रशस्त करती है। आशा है इस पुस्तक का गहरा स्वागत होगा। वृद्ध आचार्य इस पुस्तक के द्वारा सभी शान्तिप्रिय व्यक्ति के धन्यवाद के पात्र हैं।

जिन्हें विश्व की एक संस्कृति के प्रति रुचि नहीं है उनके लिए भी पुस्तक में अनेक महत्त्वपूर्ण बातें हैं। समता और उदारतावादी चिन्तन का अधिकतम ज्ञान तो होगा ही। अनेक शास्त्रों और उनके पारिभाषिक शब्दों के समझने में भी सुविधा होगी। कृतांतपंचक (वेद, सांख्य, योग, पाँच रात्र, पाशुपत मत), समन्वयाध्याय, अखण्ड महायोग, सर्वक्षार प्रवृत्ति, दिव्यौद्य, सिद्धौद्य, मानवौद्य, सर्वदेवमय:काय:, सहजयोग, आवाप, उद्वाप आदि पुरातन शास्त्रीय शब्दों से परिचय होता है। अनेक शब्दों के नये-नये अर्थ बताये गये हैं। इससे पुस्तक भारतीय चिन्तन का एक समन्वित दस्तावेज बन गया है। यह ग्रन्थ एक विश्रुत आन्दोलन का घोषणापत्र भी है। निबन्ध भी है। विश्व एकता के और भी प्रयत्न हुए हैं। यह उनका इतिहास-सा भी है।

लेखक में व्यंग्य क्षमता भी द्रष्टव्य है। ठाकरे को वाक्शूर कहा है। अनेक अवस्तुवादी विचारकों को विकल्पवादी कहा गया है। विकल्प का अर्थ है अस्तित्वहीन वस्तु की वस्तुवादी मान्यता एवं कथन संस्कृत विद्वानों के उद्धरण प्राय: विस्तृत होते हैं। किन्तु द्विवेदीजी के उद्धरण छोटे-छोटे हैं। अनेक हैं। किन्तु कोई भी उबाऊ नहीं हैं। सभी प्रामाणिक और प्रभावोत्पादक हैं।

—प्रो० युगेश्वर

आर्यों का कर्मवाद संसार के लिए विलक्षण कल्याणदायक है। ईश्वर के प्रति विश्वास करते हुए भी स्वावलम्बन का पाठ पढ़ाता है। यह ऋषियों का अनुसन्धान है। **—जयशङ्करप्रसाद, 'कंकाल' में ज्ञानदत्त**

दुर्गा सप्तशती रहस्य

कृतिकार : **आचार्य गंगाराम शास्त्री**

प्रकाशक : आदित्य प्रकाशन

ई-4/64, अरेरा कालोनी, भोपाल - 462 016

पृष्ठ : 425 मूल्य : 250.00

दुर्गा सप्तशती अथवा दुर्गामाहात्म्य मंत्रशास्त्र का बहुप्रचलित मान्य ग्रन्थ है। इसमें असुरों से युद्ध मन्त्रों के द्वारा लड़ा जा रहा है। तान्त्रिक विचारधारा के अनुसार कुण्डलिनी जागरण के क्रम में तीन चरितों में ब्रह्मग्रन्थि, विष्णुग्रन्थि और रुद्रग्रन्थि का भेदन है। इन्हीं गूढ़ रहस्यों को प्रकट करने का प्रयास इस 'रहस्य' में किया गया है। कृतिकार आचार्य गंगाराम शास्त्री मन्त्र-तन्त्र शास्त्र के विद्वान हैं। ताण्डव रहस्य, मानस रहस्य, बाहुक रहस्य, श्रीसूक्त रहस्य, मुद्रा रहस्य प्रभृति इनकी कृतियाँ साधकों के लिए मार्गदर्शक हैं। दुर्गा सप्तशती पर यह अपने ढंग का ग्रन्थ है जो मन्त्रों के रहस्यों को समझने में अत्यधिक सहायक है। **—पानासि**

रतनगढ़ शतक

कृतिकार : **आचार्य गंगाराम शास्त्री**

प्रकाशक : आदित्य प्रकाशन

ई-4/64, अरेरा कालोनी, भोपाल - 462 016

पृष्ठ : 31 मूल्य : 20.00

आचार्य गंगाराम शास्त्री, जिन्होंने 'दुर्गा सप्तशती रहस्य' लिखा है, उन्हीं की कृति 'रतनगढ़ शतक' वीररस का काव्य है। 106 छन्दों में रतनगढ़ के नरेश रतन सिंह परमार राजाओं में वीरपुरुष थे। अलाउद्दीन के शासनकाल में वे रतनगढ़ के जागीरदार थे। उनकी रूपवती कन्या मांडूला को अलाउद्दीन अपहरण कर पत्नी बनाने का स्वप्न देखता था। रतन सिंह से युद्ध हुआ और वे वीरगति को प्राप्त हुए। नरेश की रानियों ने अग्नि को समर्पित किया। मांडुला कुमारी थी इसलिए सती नहीं हो सकती। भूमि में छेद हो गया और उसी में प्रवेश हो गयी।

जायसी ने जिस पद्मिनी का वर्णन 'पद्मावत' में किया है, वह तथ्यों से परे काल्पनिक कथा है। अलाउद्दीन जिस रूपवती का अपहरण करना चाहता था, वह पद्मिनी नहीं मांडुला थी। कवि ने सारे इतिहाससम्मत तथ्यों को आधार बनाकर इस वीररस काव्य की रचना की है। **—पानासि**

सरकार बनाने के अचूक नुस्खे, आत्ममुग्ध, शिखंडी का जयघोष

रणविजय सिंह

प्रकाशक : साहित्य संगम, इलाहाबाद

इन दिनों हिन्दी कथा साहित्य में नौकरशाह रचनाकारों का हस्तक्षेप बढ़ा है। यद्यपि इनमें अधिसंख्य अहमन्यताजन्य मानसिकता से ग्रस्त एवं 'छपास' के आकांक्षी दिखाई पड़ते हैं पर कतिपय साहित्य-सर्जक जीवन क्षेत्र के विविध अनुभवों तथा विसंगतियों के संश्लिष्ट चित्र उभाड़ने में पर्याप्त सफल हुए हैं। ऐसे सर्जकों में श्री रणविजय सिंह बड़ी सम्भावनाओं से भरे प्रतीत होते हैं। भारतीय रेल में उच्चाधिकारी होते हुए भी उनकी तीन गद्य कृतियाँ प्रकाश में आई हैं—(1) शिखण्डी का जयघोष, (2) आत्ममुग्ध, (3) सरकार बनाने के अचूक नुस्खे। इन कृतियों में व्यंग्य-शैली के माध्यम से राजनीतिक जोड़-तोड़ के पार्श्व में छिपी गर्हित मानसिकता प्रकट हुई है। देश जाय भाड़ में—सरकार बननी चाहिए—निबन्धों का मूल स्वर है।

'शिखण्डी का जयघोष' तथा 'आत्ममुग्ध' रचना में व्यंग्य निबन्धों की तासीर लेखक के सधे निबन्धकार को अभिव्यक्त करती है। बैरिन भई रेलिया इत्यादि निबन्ध उनके वास्तविक ग्रामीण बोध को रेखांकित करते हैं। भारत की आत्मा गाँवों में बसती है, श्री सिंह के निबन्धों का प्रतिपाद्य लगता है। ध्यातव्य है कि उनकी उक्त कृति राज्य हिन्दी संस्थान, लखनऊ, उत्तर प्रदेश से पुरस्कृत है।

— उदयप्रताप सिंह, सारनाथ, वाराणसी

शीघ्र प्रकाश्य

प्राचीन कथा-साहित्य का अनमोल रत्न

सिंहासनबत्तीसी

राजा भोज जब-जब सिंहासन पर बैठने का उपक्रम करते, पुतलियाँ उन्हें राजा विक्रम की पराक्रम-कथा सुनाकर सिंहासन पर बैठने के अयोग्य सिद्ध कर बैठने से रोकतीं हैं।

बत्तीस पुतलियों द्वारा कही गई राजा विक्रम की हृदयस्पर्शी एवं रोमांचक बत्तीस कहानियाँ।

पृष्ठ : 150 मूल्य : 100.00

विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

भारतीय वाङ्मय

मासिक

वर्ष : 5 दिसम्बर 2004 अंक : 12

प्रधान सम्पादक

पुरुषोत्तमदास मोदी

सम्पादक

परागकुमार मोदी

वार्षिक शुल्क

रु० 40.00

अनुरागकुमार मोदी

द्वारा

विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

के लिए प्रकाशित

वाराणसी एलेक्ट्रॉनिक कलर प्रिण्टर्स प्रा० लि०

वाराणसी

द्वारा मुद्रित

E-mail : sales@vvpbooks.com

Website : **www.vvpbooks.com**

डाक रजिस्टर्ड नं० ए डी-174/2003

RNI No. UPHIN/2000/10104

प्रेस रजिस्ट्रेशन एक्ट 1807 ई० धारा 5 के अन्तर्गत

Licenced to post without prepayment at

G.P.O. Varanasi

Licence No. LWP-VSI-01/2001

सेवा में,

प्रेषक : (If undelivered please return to :)

विश्वविद्यालय प्रकाशन

प्रमुख प्रकाशक एवं पुस्तक विक्रेता

(विविध विषयों की हिन्दी, संस्कृत तथा अंग्रेजी पुस्तकों का विशाल संग्रह)

विशालाक्षी भवन, पो०बाक्स 1149

चौक, वाराणसी-221 001 (उ०प्र०) (भारत)

VISHWAVIDYALAYA PRAKASHAN

Premier Publisher & Bookseller

(BOOKS IN HINDI, SANSKRIT & ENGLISH FOR STUDENTS, SCHOLARS, ACADEMICIANS & LIBRARIAN)

Vishalakshi Building, P.O. Box : 1149

Chowk, VARANASI-221 001(U.P.) (INDIA)

☎ : Offi. : (0542) 2421472, 2413741, 2413082, (Resi.) 2436349, 2436498, 2311423 ● Fax : (0542) 2413082